1934B (and later) **On Children and related issues**

Including notes and copies of articles published later

1934B Introduce Generosity to Children

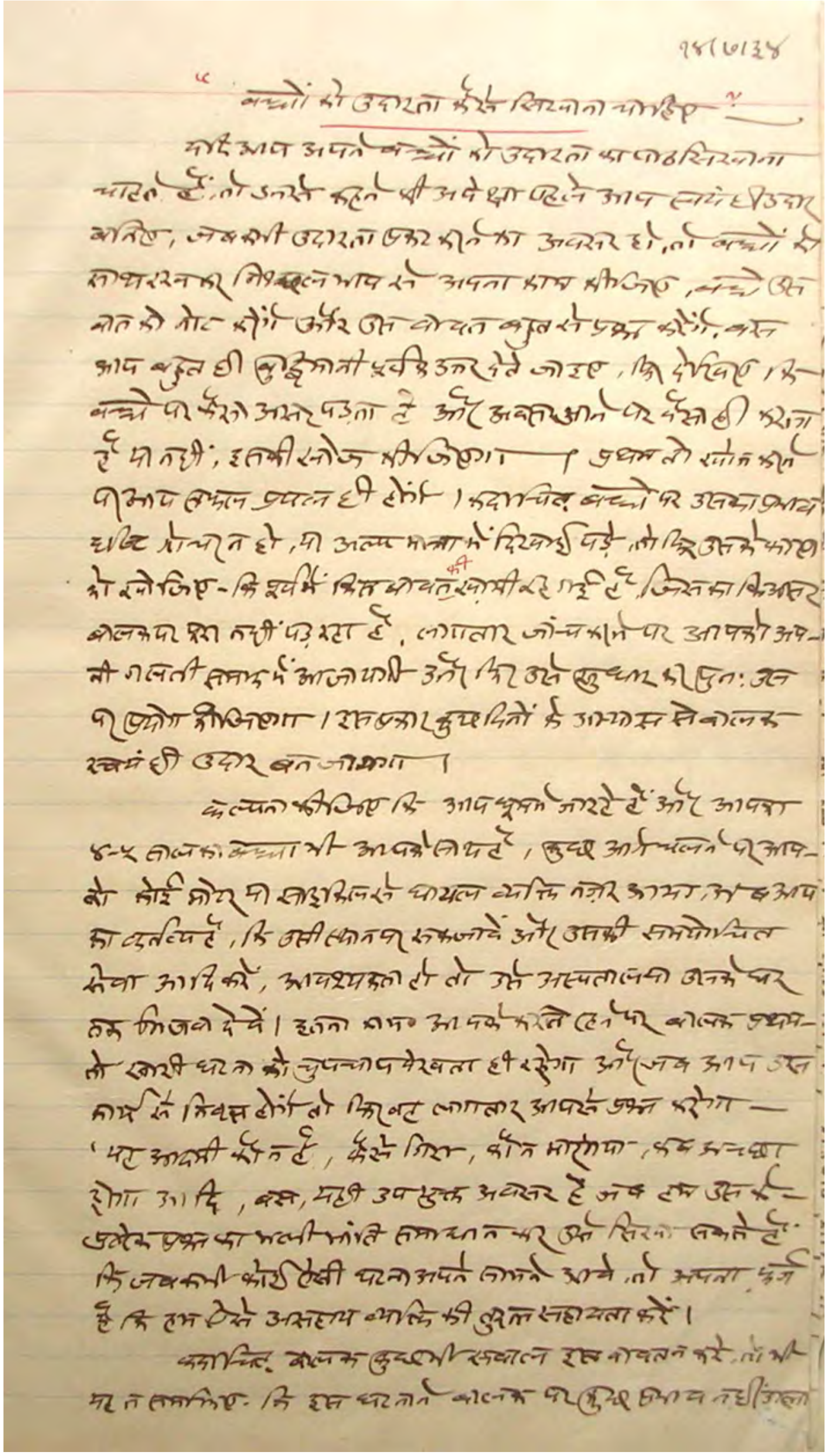

१४।७।३४

"बच्चों को उदारता कैसे सिखाना चाहिए"

यदि आप अपने बच्चों को उदारता का पाठ सिखाना चाहते हैं, तो उनसे कहने की अपेक्षा पहले आप स्वयं ही उदार बनिए, जब कभी उदारता प्रकट करने का अवसर हो, तो बच्चों के सामने स्वाभाविक रूप से अपना काम कीजिए, बच्चे उस बात को नोट करेंगे और उस वक्त बहुत से प्रश्न करेंगे, बस आप बहुत ही बुद्धिमानी पूर्वक उत्तर देते जाइए, फिर देखिए कि बच्चों पर कैसा असर पड़ता है और अवसर आने पर वैसा ही करता है या नहीं; इसकी खोज कीजिएगा। प्रथम तो [illegible] आप निष्फल प्रयत्न ही होंगे। कदाचित् बच्चों पर उसका प्रभाव दृष्टिगोचर न हो, या अल्प मात्रा में दिखाई पड़े, तो फिर उसके कारण को खोजिए - कि पूर्व में किन आदतों की गुलामी रह गई है, जिसका कि असर बालक पर ऐसा नहीं पड़ रहा है, लगातार जाँच करने पर आपको अपनी गलती समझ में आ जायगी और फिर उसे सुधार कर पुनः उस प्रयोग कीजिएगा। इस प्रकार कुछ दिनों के अभ्यास से बालक स्वयं ही उदार बन जायगा।

कल्पना कीजिए कि आप घूमने जा रहे हैं और आपका ४-५ साल का बच्चा भी आपके साथ है, कुछ और चलने पर आपको कोई मोटर या साइकिल से घायल व्यक्ति नज़र आया, अब आपका कर्तव्य है, कि वहीं तांगा रुकवावें और उसकी समयोचित सेवा आदि करें, आवश्यकता हो तो उसे अस्पताल या उनके घर तक भिजवा देवें। इतना काम आपके करते हुए पर बालक प्रथम तो सारी घटना को चुपचाप देखता ही रहेगा और जब आप उस कार्य से निवृत्त होंगे तो फिर वह लगातार आपसे प्रश्न करेगा — 'यह आदमी कौन है, कैसे गिरा, कौन मारा था, अब अच्छा होगा आदि', बस, यही उपयुक्त अवसर है जब हम उसके प्रत्येक प्रश्न का भली भांति समाधान कर उसे सिखा सकते हैं कि जब कभी कोई ऐसी घटना अपने सामने आवे, तो अपना फर्ज है कि हम ऐसे असहाय व्यक्ति की तुरन्त सहायता करें।

कदाचित् बालक कुछ भी सवाल इस बाबत न करे, तो भी यह न समझिए कि इस घटना का बालक पर कुछ प्रभाव नहीं डाला

है। वहीं उन घटनाओं ने बालक के हृदय पर अपना घर कर लिया है और वह मन ही मन उन समस्या को सुलझाने का प्रयत्न करता है क्योंकि जबकि बालक जन्म से ही स्वाभिमानी पैदा होता है और उसी स्वाभिमान के फलस्वरूप स्वयं ही उन घटनाओं की समस्या को हल कर लेना चाहता है। यदि उसे सारी घटना की समस्या स्वयं सुलझती दिखेगी, तो वह उदारता का पाठ स्वयं ही सीख जायगा और यदि उसके प्रयत्न करने पर भी उसे समझ में नहीं आयगा, तो वह तुरन्त ही आपसे उन सब सवालों के जवाब पूछेगा — जो कि उसके तर्क-वितर्क शील मस्तिष्क ने उत्पन्न किए हैं। इस प्रकार से यह बात सिद्ध होती है कि बालक — चाहे प्रश्न करे या न करे — परन्तु सारी घटना ने उस पर पूरा-पूरा प्रभाव किया है और उसके सरल हृदय में यह अंकित कर दिया है कि जैसे इस विपत्ति के समय मेरे पिताजी ने इस दुखी और असहाय व्यक्ति की सेवा की है, मुझे भी अवसर आने पर ऐसा ही करना चाहिए। क्योंकि बालक दृढ़ संकल्पशील हुआ करते हैं — आप उदाहरण में ही देखिए - यदि बच्चे का दिल किसी चीज़ के लेने के लिए मचल जाता है, तो चाहे कुछ भी हो, पर वह उसे लेकर ही छोड़ेगा। यह उसके हठीले पन का दोष न समझ कर दृढ़ संकल्पता का गुण ही है, परन्तु हम अपनी बेवकूफी से उसे अवगुण समझते हैं और उसे तोड़ कर, उसकी मंशा को पूरी न कर — बचपन में उसका सत्यानाश कर डालते हैं। इतना ही नहीं — भारी भूल कर बैठते हैं कि उसके उन स्वाभाविक गुणों को न समझ कर और उसे सुमार्ग से गिराकर कुमार्गगामी तो स्वयं बना देते हैं और फिर पीछे से कहते हैं, यह बड़ा हठी है, यह तो बिल्कुल बिगड़ गया आदि।

हां, तो मैं मूल बात पर आता हूं, कि जब बच्चे ने आपसे उस घटना बाबत जो कुछ भी पूछा है, उसका तो सत्य ध्यान से ही देना चाहिए — साथ ही यदि बालक की रुचि उस ओर बढ़ती दिखलाई आवे तो उसे वैसी ही दूसरी घटनायें और भी सुनाना चाहिए — और साथ ही यह भी बताना चाहिए कि उस समय असहायों को किस व्यक्ति ने किस प्रकार सहायता पहुंचाई और कैसे उनका उस विपदा से उद्धार किया।

पर होता क्या है कि हम अधिकतर ऐसे अवसर पर स्वयं ही सहृदयता को तिलांजलि देकर - चुपचाप धता देकर आगे से चल निकल जाते हैं और इस प्रकार बालक को जिसे पहिले सहृदयता की शिक्षा का पाठ हम स्वयं ही सिखाते हैं। पर यहां एक और गौर करने लायक यह है कि बालक स्वभावत: ही कुतूहल-पसंद होते हैं, उन्हें जहां भी कोई नई चीज दिखती कि वे जिज्ञासु भाव से उसे देखने को लपकते हैं - और उसे पूरी तरह जानने का प्रयत्न करते हैं - ऐसी दशा में जब हम चुपचाप उस स्थान से खिसकना चाहते हैं, और बालक उस स्थान से हटना नहीं चाहता है या उस घटना की बाबत कुछ प्रश्न पूछा करता है तो हम उसके सवालों का अनादर करके या उसे धमकी देकर के आगे बढ़ने का उपक्रम करते हैं और बालक के सत्यान्वेषी [illegible] करते हैं।

आप कहेंगे कि इसमें उसके सत्यान्वेषी भावनाओं की कौन सी बात है, और इन दुर्घटनाओं की बातें जानने या पूछने की जरूरत ही क्या है? पर इसका समाधान यह है कि

घटना-चक्र के जानने की जो इच्छा बालक के हृदय में पैदा हुई थी उसे कुचलने के कारण आपने उसकी बुद्धि पर कुठाराघात किया। इससे बालक का दोतरफा नुकसान हुआ - इधर तो यह कि उसकी बुद्धि का विकास रुका और उधर यह कि उस बालक के हृदय में अंतरात्मा की पुकार सुनने की जो प्रकृतिदत्त देन थी, उस पर पत्थर पड़ा। क्योंकि बालकों में भीतरी-प्रेरणा को समझने की तदनुसार काम करने की बहुत अधिक शक्ति होती है, पर हम बार-बार कुचल कर उसे एकदम ही नष्ट कर देते हैं; इस ~~[illegible]~~ महान गलती के फल स्वरूप उस बेचारे होनहार बालक का जीवन बिलकुल नष्ट हो जाता है पर आश्चर्य है कि हम ऐसी बातों को न तो गलती ही नहीं समझते हैं, बल्कि जरा सी बात कह कर टाल देते हैं। हमारे इन भूलों का बालक के सुकोमल हृदय पर क्या असर पड़ता है यह बात क्या कोई हमारे बालक-बालिकाओं के शिक्षित [illegible] पिता 'कहने के स्थान पर पढ़ने' [illegible] किस नाम से सम्बोधन करेंगी — !!!

[illegible signature]
10/7/3

ब्रॉडकास्ट
प्रातः ८-४५ बजे

श्री
सन्तान-निर्माण
'बच्चों की सँभाल'

श्रीगोपुर भवन उज्जैन
१०।१।३५

प्रायः लोगों की यह धारणा है और मेरी भी अभी तक यह विचार धारणा तक थी, कि बच्चों के - सन्तान के पालन-पोषण में कौन सी बड़ी कठिनाई या बुद्धि की आवश्यकता है। बच्चों को चाहिए ही क्या है - "भरपेट दूध, पहिनने ओढ़ने का कपड़े और बहुत प्यार-दुलार का लाड़ खाना-पीना मिले कि। बस, पर्याप्त है, इससे आगे हमारी कोई जिम्मेवारी नहीं"। इसी अज्ञान से, लोगों की असावधानी से दिन प्रति दिन बालकों की मृत्यु संख्या बढ़ती जा रही है फिर जो सन्तान बची भी रहती है, तो दुर्बल, रोगी, चिड़चिड़ी या ऐसी ही स्वभाव वाली तैयार होती है। इसका एकमात्र कारण माता-पिताओं की असावधानी का भूल ही है। इतने वर्षों के सूक्ष्म निरीक्षण तथा अनुभव के आधार पर मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूं, कि सन्तान का योग्य या अयोग्य होना कोई दैवी विधान नहीं है। मनुष्य-माता-पिता जैसी चाहें वैसी सन्तान बना सकते हैं। उनका सुधार या बिगाड़ उनके भविष्य का निर्माण हमारे हाथों से ही हुआ करता है।

लोग कह सकते हैं, कि फिर तो दैव या कर्म कोई चीज ही नहीं होती, पर मैं कहता हूं कि दैव या कर्म आखिर है क्या बला? अरे, वे भी तो आखिर हमारे पूर्वोपार्जित पुरुषार्थों का फलमात्र ही हैं, कल दिन हमने जो पुरुषार्थ किया था उसका आज हमें फल मिल गया। उस दैव को यदि हम जांचें तो पता चलेगा, कि उसकी प्राप्ति का उपादान कारण कल का पुरुषार्थ था आज कहा जाने वाला दैव और निमित्त कारण आज का पुरुषार्थ पड़ता है। इसी कल और आज की विवक्षा या भेद से एक ही पुरुषार्थ के दो नाम हो जाते हैं, जैसे कल का किया कार्य आज भूत का कार्य कहाने लगता है और आज का किया कार्य आज वर्तमान कहलाता है। कल की बनाई वही रोटी जो कल ताज़ी कहाती थी आज वही बासी या अन्य नाम से पुकारी जाने लगती है, बोलो वैसे देखा जाय, तो दैव और पुरुषार्थ का इतना ही रहस्य है। इस वास्तविक कारण-कार्य के रहस्य को ही न समझने के कारण लोग 'हाय दैव, हाय दैव' चिल्लाया करते हैं। पर मैं सैकड़ों अनुभवों के आधार पर दावे के साथ यह सिद्ध कर सकता हूं, कि प्रत्येक कार्य का कारण उनके स्वयं का किया हुआ पुरुषार्थ ही है। हां, यह होता है कि कभी कभी वे कार्य हमसे अज्ञात दशा में हो जाते हैं, जिन्हें

न समझने के कारण ही हम 'दैव' 'दैव' चिल्लाया करते हैं।

अब हमें यह देखना है कि बालक के जीवन के निर्माण में किस २ सामग्री की आवश्यकता है। उसके जन्म होने से पूर्व कैसी नींव, या भूमिका, सेज, तैयार करने की आवश्यकता है, तो प्रकृति हमें सिखलाती है, कि तुम खेत में आगे चलकर जैसा बीज बोना चाहते हो, उसके अनुसार उसे तैयार कर लो। जैसे उड़द, मूंग, मटर, जुंवार बोने के लिए कैसी जमीन, कौनसी ऋतु, कौन खाद और कौन २ सी बाहरी उपचारों की आवश्यकता है या गेहूं, चना, अलसी आदि पैदा करने के लिए कैसी जमीन, कैसी खाद, कौनसी ऋतु और किन २ बाहरी सामग्रियों की जरूरत है? इस तैयारी के बाद - इस द्रव्य, क्षेत्र, काल भाव के निर्णय के पश्चात् यदि तुम बीज को बोओगे, तो निश्चयतः तुम्हारी मनो कामना सफल होगी।

कोई भी शंका की जा सकती है, कि दैवी विधान, अतिवृष्टि, अनावृष्टि, लू या पाला आदि आ पड़ें, तो सारे किये हुए पुरुषार्थ पर पानी फिर सकता है वहां तो आपको दैव ही प्रधान मानना पड़ेगा। इसके उत्तर में मैं कह देना चाहता हूं, कि यदि आप सूक्ष्म अवलोकन से देखेंगे, तो मेरे ऊपर बताये हुए द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव के निर्णय में इन आकस्मिक घटनाओं - दैवी कहे जाने वाले विधानों का भी बहुत अच्छी तरह निर्णय हो जाता है, या किया जा सकता है। अर्थात् निमित्त ज्ञानों में 'भौम' नामक निमित्त भी शामिल है, जिसके सूक्ष्म अभ्यास से - भूमि का वर्ण, गन्ध या अन्य कोई विशेषता के देखने से ऐसी आकस्मिक घटनाओं का भी पता चल जाता है। आप कहेंगे इस - विषय के शास्त्र मिलते नहीं हैं, या मिलते भी हों तो कौन अध्ययन का कष्ट उठाये आदि, तो इसके उत्तर में पहिली बात तो यह कहनी है कि इसके निर्णय के लिए आपको दूर नहीं भटकना पड़ेगा, अपने-१ वर्ष ही अपने खेत की और पड़ोसियों के खेतों की भूमिका निर्णय थोड़ी सी संभाल से कीजिए, आप स्वयं ही उन बातों के विशेषज्ञ बन जावेंगे। और दूसरी बात यह कह देना चाहता हूं, कि यदि तुम इतनी भी तकलीफ या पुरुषार्थ नहीं करना चाहते, तो मजे से दैव को रोइए और सभी प्रकार के पुरुषार्थों को तिलाञ्जलि दे दीजिए। थोड़ी बहुत भी मेहनत या पुरुषार्थ के भी कष्ट उठाने की क्या आवश्यकता है, सारे संसार की तुम्हारी आवश्यकता होती -

तुम्हारा चिर-परिचित प्रिय देव ही बन जायगा। अस्तु विशेष लिखने का प्रकरण नहीं, कहने का सार यही है, कि जिस प्रकार खेती करने के लिए उक्त द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव रूप सामग्री की आवश्यकता है, जिस के ठीक २ निर्णय के बिना हम खेती के अच्छे और बुरे फल का पता नहीं लगा सकते उसी प्रकार हमें सन्तान उत्पन्न करने के पूर्व इस बात की भी बड़ी २ आवश्यकता है, कि भविष्य में जैसी सन्तान पैदा करना चाहते हैं, तो उसके योग्य द्रव्य क्षेत्र काल भावों का अन्वेषण करें; निर्णय करें।

मान लीजिए आप ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र इन चार वर्णों में से किसी एक स्वभाव वाली सन्तान पैदा करना चाहते हैं या चारों ही वर्णों के स्वभाव वाली चार सन्तान पैदा करना चाहते हैं, तो आप को दूर भटकने की — उस उस वर्ण की कन्या को ढूंढने की या विवाह करने की कोई आवश्यकता नहीं है। जैसे द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव के परिवर्तन मात्र से वही खेत जो आज सियाले की फसल पैदा करता है, कल उन्हाले की फसल पैदा कर सकता है या करता है। हमें इसके लिए भिन्न २ खेत ढूंढने की आवश्यकता नहीं पड़ती (यदि कोई ढूंढता फिरे, तो उसे सिवाय मूर्ख या अज्ञ के क्या कहा जा सकता है)। उसी प्रकार भिन्न भिन्न स्वभाव वाली या वर्णों की योग्यता वाली सन्तान पैदा करने के लिए हमें अन्यान्य स्थलों की या भिन्न वर्णीय कन्याओं के लाने की कोई आवश्यकता नहीं है। आप बुद्धि से काम लीजिए, थोड़ा सा परिश्रम उठाइए, पुरुषार्थ कीजिए, तुरन्त मनोवाञ्छित सन्तान को प्राप्त कीजिए।

मान लीजिए — कल्पना कीजिए, कि आप क्षत्रिय स्वभाव वाली शूर-वीर सन्तान पैदा करना चाहते हैं, तो पहिले स्वयं ही क्षत्रिय स्वभाव का अध्ययन कीजिए, स्वयं को क्षत्रिय स्वभाव से ओत-प्रोत कीजिए, अपने को शूरवीर बनाइए। यह कला आपको केवल १-२ दिन की कवायद या परेड से नहीं प्राप्त होगी, आप क्षत्रिय स्वभाव वाले २-४ दंड बैठक या मुगदर फिराने से नहीं बन जायेंगे; किन्तु वास्तव में आपको मनसा, वाचा, कर्मणा क्षत्रिय बनना पड़ेगा। 'क्षतात् किल त्रायत इत्युदग्रः क्षत्रस्य शब्दः भुवनेषु रूढः' का पूर्णतया सिद्धान्त पालन करना पड़ेगा। जैसे —

गेहूं या चना की खेती उत्पन्न करने वाले को योग्य बीज की प्रथम आवश्यकता होती है उसी प्रकार इस रूप में निर्विघ्न बीज द्रव्य की सन्तान को उत्पन्न करने के लिए ~~देखना~~ आवश्यकता है।

इसके बाद जैसे गेहूं या चने की खेती के लिए उसके योग्य भूमि को - खेत को तैयार करने की आवश्यकता पड़ती है उसी प्रकार आप को दूसरे नम्बर अपनी स्त्री रूपी भूमि को - खेत को भी मनोवांछित सन्तान उत्पन्न करने के लिए तैयार करना पड़ेगा। बीज यदि कितना ही सुन्दर बढ़िया या सर्वोत्तम ही क्यों न हो, किन्तु यदि उसे उसके अयोग्य खेत में डाल दिया जायगा ~~-~~ बोया जायगा, तो उसका व्यर्थ जाना या अल्प फल देना स्वाभाविक है उसी प्रकार आप स्वयं कितने ही योग्य क्यों न हों, पर यदि स्त्री को भी तद्नुरूप न बनायेंगे, उसी प्रकार की भावनाओं से ओतप्रोत न कर देंगे, तो कभी भी इच्छित सन्तान की प्राप्ति नहीं हो सकती। इसे कहते हैं क्षेत्र रूप सामग्री का निर्णय करना। दूसरे - सन्तानोत्पत्ति किसी भी कार्य के करने में निर्णय करने की आवश्यकता हुआ करती है।

इसके बाद तीसरे नम्बर पर आवश्यकता है काल के निर्णय की। मान लीजिए, बीज भी बढ़िया है, खेत भी उपजाऊ है, किन्तु अकाल में, असमय में यदि बीज बोया जायगा, तो उसका व्यर्थ जाना अवश्यंभावी है। यदि असाढ़ में बोया गया गेहूं या मार्गशीर्ष में बोया गया उड़द या ज्वार उत्पन्न भी हो गया, तो कितने दिन स्थिर रहेगा, २-४ दिन हरियाली बना रह सकता बनेगा, उसी प्रकार इच्छित सन्तान को पैदा करने के लिए उसके अनुकूल समय या ऋतु का भी निर्णय करना आवश्यक है। आप पूर्ण बालक पाना चाहते हैं: आपकी स्त्री भी तदनुरूप ही है कि भी यदि असमय में समागम होगा - बीज बोया जायगा, तो उसका व्यर्थ जाना उसी प्रकार निश्चित है जिस प्रकार कि बीज का. ~~यदि किसी तरह सन्तान उत्पन्न~~ प्रथम तो अकाल में या असमय में किया गया समागम सार्थक ही नहीं होगा. यदि हो भी गया तो उसका पतन निश्चित है. यदि देखो हो गया, सन्तान भी उत्पन्न हो गई, तो उस असाढ़ में बोये गये गेहूं या चने के समान २-४ दिन की हरियाली दिखा कर ~~नष्ट~~ नष्ट हो जाना निश्चित ही है।

[illegible]

1937B **Why do children steal?**

सृजन
फरवरी
1987

बच्चों में चोरी की प्रवृत्ति क्यों?

(बच्चे चोरी क्यों करते हैं) १०/७/३८

बच्चों के बाप

(माधुरी से) (श्री ... दीक्षित)
जुलाई १९३८

बच्चों की उपमा कविगण सुकोमल फूल, नवांकुर और सुन्दर तारों की आराधना से दिया करते हैं। ये वस्तुएं अपने जीवन और भरसे सुन्दरतम बनाने के निमित्त तन्मय मन, मधुर वचन, दृष्टि और कोमल स्पर्श चाहती हैं। इनको मसलकर, उनकी कुगति करके, अपमानित करके मनुष्य इन्हें नष्ट करके स्वयं नष्ट हो जायगा।

×× बड़े-बड़े मनोविज्ञानी और आचार्य बच्चों के उत्थान का प्रयत्न और चिन्तन कर रहे हैं। अनेक नये-नये आश्रम और संस्थायें खुल रही हैं जिनमें बच्चों के माता-पिता अपना तन मन और धन अर्पित कर रहे हैं; बच्चे मनचाहा खेल से उन्नति और उत्थान की पूर्ण सुविधा प्राप्त कर अधिकाधिक विकास को जा पहुँच रहे हैं।

×× कुछ माता-पिता और गुरुओं का अनुभव है कि शिक्षा में कोई किसी किस्म की सज़ा का सहारा लिये हुए बच्चे को सफल मनुष्य नहीं बनाया जा सकता; परन्तु मेरा अनुभव है कि बच्चे को किसी प्रकार का भी दंड देना अपनी और उनकी दोनों की बरबादी करना है। बच्चे की सज़ा करते-करते आदमी आदमी नहीं रह जाता, इसलिए बच्चों का बचपन उनके हृदय में गुदगुदी नहीं पैदा कर सकता। किताब फाड़ डालना, खेल में पड़कर किसी काम को भूल जाना या सबक याद न करना ये सब बातें बचपन की हैं। दूसरे बच्चे से लड़ जाना, खूब कूद फाँदकर अपने चोट लगा लेना, क्लास रूम के दरवाज़े के शीशे तोड़ देना, उलटी किताबें को मेज़ पर रखना — ऐसी बातें जानदार बच्चे ही कर सकते हैं। (सच्चा अभिभावक-यह देखकर मन ही मन प्रसन्न होता है। दुनिया भर की बुराई का बोझ अपने सिर ले लेगा, परन्तु बच्चों को अपमानित करना न पसन्द करेगा।

बेत या किताब फेंक कर मारने से कहीं अधिक भयानक बच्चे को बातों से मारना अथवा गालियाँ मारने के लिए धमकाना है। बेत लग गया, चोट जितनी लगनी थी — लग गई — किस्सा खतम हुआ। परन्तु ×× मोहन मादरचोद — आज पसलियों तक गिनती बराबर नहीं हुई तो तुम्हें ... कच्चा चबा जाऊंगा। कोमल हृदय पर कहीं अधिक चोट पहुंचाते जाते हैं।

इस लेख में उन्होंने अपनी देख-रेख में रहने वाले कई लड़कों की चोरी, झूठ, बदमाशी आदि करने के उदाहरण देकर यह बताया है कि निम्नलिखित लोगों [illegible] उपर-उपर कर उन्हें धमकाना करने की ताकीद करते हैं, वह बिल्कुल गलत है और ऐसा करने से बच्चे छुप छिपकर चोरी करने पर उतारू हो जाते हैं। अतः उन्हें उस काम के करने के लिए पहले स्वतंत्र छोड़ देना चाहिए- जिससे उस ओर से उन्हें स्वयं घृणा पैदा हो जाय

वे ज्यों ही लिखते हैं कि—

xxx मैं कई दिन सोच-साच कर इस नतीजे पर पहुँचा - कि थोड़े दिन तक ....चोरी करने में बाधा न डाली जाय, बल्कि इस काम में सहायता पहुँचाई जाय, जिससे उसकी इस वासना की तृप्ति-होने का रास्ता खोला जाय। फिर इतने पर भी अगर वह आदत न छोड़े तो जब कभी चोरी करते दिख पड़े - तो उस चोरी को साहूकारी - जान बूझकर काम करना करार दिया जाय। xxx

यथार्थ में यदि देखा जाय - कि बच्चे चोरी ही क्यों करते हैं - तो पता चलेगा कि इसके दो कारण हैं- १ अंतरंग और २ बहिरंग। जब किसी बच्चे के अंतरंग में लोभ स्वभाव का तीव्र उदय या उदीरणा होती है, तो उसके हृदय में नाना प्रकार की वस्तुओं के संग्रह करने की तीव्र लालसा जागृत होती है, तब उसके यह भाव उत्पन्न होते हैं कि किस प्रकार मुझे अपनी मनोनुकूल चीजों के संग्रह करने का सुभीता होता रहे, अतः बच्चा इस भीतरी प्रेरणा के अनुसार अपनी वांछित सिद्धि के लिए उपयुक्त अवसर की फिक्र में रहने लगता है। यह अंतरंग कारण हुआ और बाहर में वह देखता है कि हमारे माता पिता रुपये दे ही बढ़िया [illegible] बाजार से इन चीजों को खरीद कर लाते हैं और अपने संग्रहालय में जमा करते हैं। बच्चा भी अपना पाने की फिक्र में लगा रहता है। माता-पिता को इतनी फुरसत कहाँ कि वे उनकी इतनी स्वाभाविक [illegible] जान सकें- कि आज कल बच्चों के दिमाग में [illegible] बात [illegible] रही है। इसलिए वे न तो उन्हें अपना पैसा देते और न [illegible] विचार ही करते हैं न बच्चों की मांग पर उन्हें

रुपया पैसा ही देते हैं। क्योंकि उनका यह ख्याल रहता है कि
यदि उसे रुपया पैसा दिया जायगा - तो वह उस पैसा का खर्च भी
ठीक कर लेगा - इसलिये वे तो उस ओर से निश्चिंत रहते हैं।
और उधर बच्चों को यह धुन सवार रहती है कि जैसा जितना
पाऊं - जितना कि मैं अपने आप को संभाल सकूं, बस, —
जब वह देखता है कि पिताजी बाज़ार में चीजें खरीदने वाला पैसा
जेब में से निकाल कर देते हैं, तो वह समझता है कि रुपया रखने
का स्थान जेब ही है। फिर क्या है — मौका पाकर वह दुकान वाले के
खूंटी पर टंगे वो बाप की ज़रा बचते ही जेबों में हाथ डालेगा —
और जो कुछ भी चीज़ मिलेगी — उसपर हाथ साफ़ कर देगा। यदि
वहां पर भी यह हाथ साफ न हुआ - तो उसे कि ढूंढ लेगी। कि
पिता जी अपनी पेटी में से रुपया निकालते हैं, उनकी चाबी अमुक
स्थान पर रहती हैं; बस वह खुलने ही उनकी खोजों में रहने लगेगा
और मौका पाकर चाबी से - ताला खोलेगा और जो कुछ भी
हाथ में आयेगा - लेकर उसे उसको अपने खर्चों में कर लेगा —
और इस प्रकार से वह चोरी का पक्का आदी बन जायगा।

मेरे प्यारे बन्धुओं — आपको बालकों की एक-एक —
आवश्यकता का बड़ी खूबी के साथ जांच करते रहना चाहिये और
यथोचित उनकी पूर्ति करते रहना चाहिये।

इस बाबत एक और खास बात आप लोगों से यह कह देना
चाहता हूं, कि आपको अपना बच्चा भूल कर के भी अपने किसी
रिश्तेदार के यहां कभी भेजना चाहिये - यदा चित जाने आने का
काम भी पड़े तो अपने ही साथ ले जाना चाहिये और वापिस भी अपने
साथ ही ले आना चाहिये। क्योंकि संगति का बालक पर ज़बर्दस्त असर
पड़ता है। जिससे हमारे वर्षों के परिश्रम पर तो कुछ दिनों में कुसंग
से पानी फिर जाता है। इस विषय में मेरा ~~एक ख़ास~~ निजी अनुभव
है। कि घर पर मेरे बच्चों को यह बता रखा था कि उसे किसी चीज़ की
आवश्यकता पड़े मुझसे कहकर पूरी कर लिया करे। उसे जब कभी
किसी चीज़ को खरीदने की जरूरत होवी तो मुझसे पैसे मांग लेता
था। दैववशात् उसे कुछ दिन देहात में अपने निजी सम्बन्धी के

खाँसने का अवसर आया – उसका [illegible] उसकी माँ गुजर चुकी थी – अतः अकेला हो गया था – वहाँ का जो बे सुविधा में रहती थी, तो वहाँ का कुछ था, पर संयोगवश मिला और निर्दोष था। वहाँ के जंगली उसने एक बार दवाओं से पैसा पाया – तो उन्होंने देने से इंकार कर दिया – पर बच्चे को तो अपनी धुन सवार थी की बात हो। फल स्वरूप ऊपर जो कुछ कहा गया है, उसी के अनुसार उसने अपनी कसर पूरी की, दैव संयोग से वह चोरी करते पकड़ा तो नहीं गया, पर चोरी का माल जब उसकी जेब में से बरामद हुआ तो सारी पोल खुली। मैंने बड़े विचार से – सब बातों पर विचार किया, तो उपरोक्त स्पष्ट – ज्ञात हुआ।

इस सारे कथन का सार यही है कि बालक की जरा सी भी आवश्यकता को तुरन्त पूरी करते रहना चाहिए, क्योंकि बिना आवश्यक प्रेरणा कुछ बालक किसी चीज़ के करने के लिए हठ नहीं करता है और जब वह किसी चीज़ को चाहता रहा है और हम उसे पूरा न करें – तो स्वभावतः – किसी न किसी और से जाकर अपनी आवश्यकता को पूरा करेगा। याद रखिए, यदि उसकी इन छोटी – २ सी चीजों को यों ही टालते रहेंगे, तभी इसकी तो आदत ही बन जाती है। आदि कहना [illegible] – तो इसमें कोई सन्देह नहीं रह जाता है कि बच्चों के लिए चिन्ता करनी रह जाती। अब यदि चोरी की आदत पड़ गई – तो [illegible] के आगे भी [illegible] आपको कहना – न किसी और को [illegible] बालक की

हीरा [illegible]
[illegible]/७/५१

1937 Some children do not speak much (Jain Sandesh, 1937)

23/6/36

कौन से बालक बचपन में कम बोलते हैं?

बहुधा लोगों को यह कहते सुना जाता है, कि अमुक अमुक बालक तो बिलकुल गूंगा है, मौन है। कुछ बोलता चालता ही नहीं, बगलें झांका करता है, इत्यादि। मालूम होता है, ऐसा कहने वाले लोग न तो सारी दुनिया के बालकों को अपने से ज्यादा बढ़कर कोई बनाना चाहते हैं, या कि उन बालकों को बेवकूफ ही समझते हैं, परन्तु उन्हें नहीं मालूम है कि बालकों की मौन प्रवृत्ति में कौनसा गुण छिपा हुआ है? उन्हें ज्ञात होना चाहिए कि जो बालक बचपन में व्यर्थ किसी से बोलते चालते नहीं हैं — चुपचाप बैठे रहते हैं न किसी से झगड़ते हैं, न किसी को सताते हैं, ऐसे उन बालकों को अत्यन्त बुद्धिमान समझना चाहिए। ऐसे बालक भविष्य में जाकर अपने ही कार्यों से सम्बन्ध रखने वाले होते हैं, वे आगे जाकर भी व्यर्थ ही में किसी के झगड़े टंटे में नहीं पड़ेंगे।

इस/

अतः माँ बाप समझा करते हों कि इसे कुछ बोलना चालना न आयगा - तो यह भविष्य में बेवकूफ ही बना रह जायगा, यह बात ऐसी नहीं है। भले ही हम उनके उन गुणों को भविष्य में जाकर स्वयं न देख सकें - पर इतना निश्चित समझिए कि दुनिया उनके गुणों पर भविष्य में मुग्ध होगी - और उनके चरणों में झुकेगी। क्योंकि ऐसे गुमसुम रहने वाले बालक बड़े विचारशील हुआ करते हैं, और जब वे देखते हैं, कि हमारे माता-पिता तो न कभी नाचते हैं, न दौड़ धूप मचाते हैं, न खिलौनों से आनन्द से ही खेलते हैं, तो फिर हमें क्यों खेलना चाहिए - हमारे खेलने से शायद हमारे माँ बाप नाराज हो जावें - हमें भला बुरा कहने लगें - इसलिए चुपचाप रहना ही श्रेयस्कर है।

मेरे सामने ऐसे कितने ही व्यक्तियों के दृष्टान्त मौजूद विद्यमान हैं - जो कि बाल्यावस्था में [illegible]

घूम घूम रहा करते थे, न किसी से लड़ते झगड़ते जबकि न किसी के साथ खेलते ही। उनके संबंधों की बात शिक्षाशास्त्रियों के समय तक बनी रही। परन्तु भविष्य में जाकर वे ही बालक इतने बुद्धिमान, प्रतिभासम्पन्न निकले कि जिन्होंने अपनी प्रतिभा से अच्छे २ विद्वानों को मात दी दिया — बड़े बड़े तार्किकों ने उनसे हार मानी। ऐसे लोग बड़े बड़े ग्रन्थों के रचयिता, संशोधक या प्रवर्तक साबित हुए हैं। इसलिए मैं पालक माँ बाप से निवेदन करूंगा कि वे बालकों के स्वाभाविक गुणों की पहचान करते रहें और यदि जीवन भी की शिक्षा को विशेष बालक की रुचि किस ओर हो उन्हें भविष्य में जाकर महान और बड़ा। हमारा काम तो सिर्फ उनकी रुचि अनुकूल रास्ते को सुझाना मात्र ही होना चाहिए, न कि जबरदस्ती — जोर जबरदस्ती अपने अनुकूल बनाने की चेष्टा करना चाहिए। यदि आपने ऐसा नहीं किया और उनकी रुचि के प्रतिकूल काम किया - तो याद रखिए कि बालक न तो अपनी रुचि के मुताबिक बन पायेंगे और न जैसा उन्हें आपकी इच्छानुसार बनना चाहिए था - वैसा बन पायेंगे।

इतना जो मैं जोर देकर लिख रहा हूं वह अपनी संतान पर प्रयोग कर - और अपनी बड़ी भूल की चूकों को याद करके लिख रहा हूं। मैं चाहता हूं कि जिस प्रकार मेरी संतान भी — आज तक भी वे बदकिस्मत बनी रही — आप दूसरों की न होने पावे - इसलिए इतना जोर देकर आप लोगों से निवेदन कर रहा हूं — आपका ही कर्तव्य बनता है कि ही नहीं। किन्तु इसकी राह में भटके हुए बालकों [illegible] के अनुभवों से लाभ उठावेंगे और अपनी संतान को बिगड़ने से बचा देंगे।

[signature]
२४/५/६१

ता० ४ नवम्बर सन् १९३७ ई०

बाल-विलास—

कौनसे बालक बचपनमें कम बोलते हैं ?

[लेखक—श्रीयुत पं० हीरालालजी जैन शास्त्री]

बहुधा लोगोंको यह कहते सुना जाता है कि 'अजी ! अमुक बालक तो बिलकुल गूंगा है, कुछ बोलता-चालता ही नहीं है, पागल-सा बैठा रहता है' इत्यादि। मालूम होता है, ऐसा कहनेवाले लोग या तो सारी दुनियांके बालकोंको अपने-जैसा बकवादी बनाना चाहते हैं, या फिर सब बालकों को बेवकूफ ही समझते हैं ? परन्तु उन्हें नहीं मालूम है कि बालकोंकी इस मौन-ग्राहितामें कौन-सा गुण छिपा हुआ है ? उन्हें ज्ञात होना चाहिये कि जो बालक बचपनमें प्रायः किसीसे बोलते-चालते नहीं हैं, चुपचाप बैठे रहते हैं, न किसीसे झगड़ते हैं, न कभी मचलते हैं, उन बालकोंको अत्यन्त बुद्धिमान् समझना चाहिये। ऐसे बालक भविष्यमें जाकर 'अपने ही कामसे' प्रयोजन रखनेवाले होते हैं। कभी भूल करके भी ऐसे बालक अनधिकार चेष्टा नहीं करते हैं और न कभी किसीके झगड़े-टण्टेमें ही पड़ते हैं।

प्रायः मां-बाप सोचा करते हैं कि यदि इसे अभीसे कुछ बोलना-चालना न आयगा, तो यह भविष्यमें बेवकूफ ही बना रह जायगा। पर बात ऐसी नहीं है, भले ही हम उनके इस गुणको भविष्यमें जाकर स्वयं न देख सकें, पर इतना निश्चित समझिये कि दुनियां उनके गुणोंपर मुग्ध होगी और उनके चरणोंमें झुकेगी, क्योंकि ऐसे गुम-सुम रहनेवाले बालक बड़े विचारशील हुआ करते हैं। वे जब देखते हैं कि हमारे माता-पिता न कभी नाचते हैं, न दौड़-धूप मचाते हैं और न खिलौनों आदिसे ही खेलते हैं तो फिर हमें क्यों खेलना चाहिये ? हमारे खेलनेसे शायद हमारे मां-बाप नाराज़ हो जायें या हमें भला-बुरा कहने लगें। इसलिये चुपचाप रहना ही अच्छा है।

मेरे सामने ऐसे कितने ही व्यक्तियोंके दृष्टान्त विद्यमान हैं जो कि बाल्यावस्थामें एकदम गुम-सुम रहा करते थे, न किसीसे लड़ने-झगड़ने जाते थे, न किसीके साथ खेलने ही। उनकी ऐसी आदतोंकी शिकायत उनके अभिभावकोंकी लम्बे समय तक बनी रही। परन्तु भविष्यमें जाकर वे ही बालक इतने बुद्धिमान और प्रतिभा-सम्पन्न निकले कि संसारको जिनके सामने नत-मस्तक होना पड़ा। अच्छे-अच्छे तार्किकों तकको उनसे हार माननी पड़ी। जिन लोगोंने महात्मा गांधीकी आत्म-कथा या पं० जवाहरलाल नेहरूकी कहानी पढ़ी होगी उन्हें मेरी इस बातपर जरा भी सन्देह नहीं रह जायगा।

ऐसे ही बालक भविष्यमें बड़े-बड़े धर्मोंके संस्थापक, संशोधक या प्रवर्त्तक प्रसिद्ध हुए हैं। इसलिये मैं प्रत्येक मां-बापसे सविनय प्रार्थना करूंगा कि वे बालकोंके स्वाभाविक गुणोंकी परीक्षा करना सीखें और यह जाननेकी कोशिश करें कि मेरे बालककी रुचि किस ओर है ? और भविष्य में जाकर यह किस ओर बढ़ेगी ? हमारा काम तो सिर्फ उनकी रुचिके अनुकूल साधनोंका जुटाना मात्र ही है, न कि जबरन प्रयोग-पूर्वक अपने सांचेमें ढालना।

यदि आपने जरा भी बल-प्रयोगसे उनकी रुचिके प्रतिकूल कार्य किया तो याद रखिये कि बालक न तो आपकी ही रुचि माफिक बन पायेंगे और न वे अपनी ही स्वाभाविक रुचिके माफिक बन पायेंगे, किन्तु दोनों ओरसे भ्रष्ट हो जायेंगे।

1937 Some children are obstinate

कौन से बालक हठी होते हैं?

जिन बालकों में जन्म से ही अपनी अन्तरात्मा की पुकार सुनने की असाधारण शक्ति होती है, वे बालक दूसरे लोगों की बात अधिक तो सुनना ही नहीं चाहते हैं, किंतु यदि इतने पर भी उन पर दबाव डालकर कोई उनकी मर्जी के खिलाफ कुछ कराना चाहता है, तो वे उसे ठुकरा देते हैं, क्योंकि उनकी आन्तरिक प्रेरणा उन्हें वैसा करने के लिए विवश करती है, पर इतने पर भी कई अज्ञानी मां बाप उन्हें अपनी इच्छानुकूल चलाने के लिए डांटते हैं, धमकाते हैं। इतने पर भी यदि बालक अपनी आंतरिक प्रेरणा के खिलाफ कुछ भी करने के लिए तैयार नहीं होता है तो वे मूर्ख मां बाप उसकी मारपीट करने पर उतारू हो जाते हैं, फल क्या होता है कि बालक तो अपनी बात पर अड़ेगा — और मां-बाप अपनी बात पर। इससे उस बेचारे बालक की स्वाभाविक शक्तियों का सत्यानाश कर दिया जाता है, उसके वे असाधारण गुण — प्रवृत्ति के सांचे में ढल दिए जाते हैं। पर हमारे भोले भाले मां बापों को यह पता नहीं है, कि बालक का 'हठ' नाम से पुकारे जाने वाला गुण कौन सी असाधारण शक्तियां रखता है। उन्हें मालूम होना चाहिए कि जो बालक भविष्य में चलकर अपनी बात पर जान देने वाले वीर, शान पर कुर्बान होने वाले होते हैं, वे ही बचपन में जिद्दी या हठी हुआ करते हैं। मैं बालक के मां बाप से निवेदन करना चाहूंगा कि वे बालकों के इन स्वाभाविक गुणों को कुचलें नहीं, किंतु उन्हें उचित मार्ग में योजना देवें - जिससे भविष्य में चलकर वे रोटी के टुकड़ों के लिए अपने धर्म कर्म को बेचने वाले न बनकर देश और धर्म पर जान निछावर करने वाले बनें। मैं तो प्रेमपूर्वक कहूंगा कि अपने बालकों की हठों को अवश्य पूरा करना चाहिए।

हमारे शास्त्रों में आई कुछ बालकों की कथायें इस-

बात भी सच्ची है कि बाल हठ अवश्य पूरी की जानी चाहिए
— यह सर्वविदित है कि राम चन्द्र बाल्यावस्था में एक बार
चन्द्रमा को ले आने के लिए- पकड़ने के लिए - मचल पड़े थे
उस वक्त उनकी माँ ने थाली मंगा कर और उसमें उसका प्रति-
बिम्ब दिखा कर उनकी इच्छा को — जिसे कि हम लोग हठ
कहते हैं — पूरा किया था। बचपन की इसी हठ ने — छोटे
ही तो आगे चल कर रावण के पंजे से सीता को छुड़ाने
का आग्रह बनाया-हठ-पकड़ाया। यदि बचपन में उनकी उस
हठ को अन्य प्रकार से-डरा धमका कर — दबा दिया
जाता - तो वे सीता को छुड़ाने के लिए इतना महायुद्ध
का ख्याल कभी नहीं करते। किंतु यह सोच कर रह जाते
कि क्या करें — जो भाग्य में था, वो हो गया — यदि सीता
भाग्य में लिखी होती तो हमारे हाथ से क्यों जाती
आदि। जैसे कि आज कल के लोग सोचा करते हैं।
इसका कारण भी यही है कि हमारे बचपन में हमारे
माँ बापों ने हमारी इच्छाओं को पूरा नहीं किया
किंतु डरा-धमका कर या पीट-पीट कर उन्हें कुचल
डाला - फिर भला बतलाइए कि हमें स्वयं आत्म
जागृति ही कैसे हो सकता है।

उपसंहार

हठी बालक आगे चल कर — स्वावलम्बी बनते हैं, पर-
मुखापेक्षी होना तो वे जानते ही नहीं हैं, अपनी ज़बान
के पक्के निकलते हैं, जो कहते हैं सो करके दिखाते हैं और
वक्त पड़ने पर — देश जाति या धर्म की आन पर बलि-
दान होना जानते हैं। आज हमें इन गुणों की भारी
आवश्यकता है अतएव अपने बालकों की प्रत्येक
इच्छा व हठ को पूरा करना अपना कर्तव्य जानिए और
उन्हें आगे से दीक्षा दो। आन पर मरने का पाठ पढ़ा
दीजिए - ताकि आगे जा कर वे अपनी मान मर्यादा की
रक्षा कर सकें।

[illegible]
२५/७/३७

1937B Why do Children Invent Lies?

२५/७/३८

क्यों बालक झूठ बोलते हैं?

जिन महापुरुषों के नाम आज महाकवि, विश्वकवि, कवि-सम्राट्, उपन्यास सम्राट् आदि उपाधियों के साथ सुनते हैं और बचपन के जीवन को जिन्होंने सूक्ष्म दृष्टि से अध्ययन किया होगा तो उन्हें इस बात के मानने में कोई एतराज न होगा - कि वे लोग बचपन में बड़े ऊधमी, शैतान, झूठे स्वांग रचने वाले और पता नहीं क्या क्या रहे हैं, किंतु बड़े होने पर वे ही महापुरुष साबित हुए हैं। इसका कारण क्या है? इतना फेरफार कैसे हो गया? इस प्रकार विचार करने से पता चलता है कि बरसाती नदी की धारा मैली, गंदली, कूड़ा करकट को बहाने वाली हुआ करती है - वही नदी ही शरद आदि ऋतुओं का - योग्य काल का योग पाकर मीठे एवं निर्मल जल की धारा बहाती हुई नज़र आती है और लोग उन्हीं नदियों के गीत गाते हैं। किन्तु जो नदी बरसात में भी - कभी - दोनों तटों के पेड़ों को उखाड़ देने वाली धारा से नहीं बही है, ~~उसमें~~ भले ही उसमें गंदला पानी ही क्यों न हो, तो क्या उस नदी से हम शरद ऋतु में निर्मल एवं मीठे जल की धारा पा सकेंगे? नहीं, कदापि नहीं। बस, यही बात ठीक अक्षरशः बालकों पर लागू होती है। जो बालक बचपन में ही दिल खोल कर नहीं खेले कूदे, तरह तरह की मस्तियाँ न कीं - झूठ बोलकर और लोगों की आंखों में धूल झोंककर भी चीज़ उठाकर न खा सके - उन बालकों से क्या आशा की जा सकती है कि वे आगे चलकर समाज, देश या धर्म के लिए कुछ काम कर दिखायेंगे। क्योंकि यह तो कुदरत का प्रवाह बचपन से ही हुआ करता है, एक प्रकार के जीवनरस की धारा जन्म से ही प्रवाहित हुआ करती है - उसमें यदि कपट, मैली मट्टी, कुढंगों का कुसंग ~~की~~ जैसी कुछ मिलती जाती है वह आगे चलकर अपने आप ही साफ दिखती जाती है। यथार्थ में तो जीवन की धारा निर्मल ही होती है, पर भिन्न २ स्रोतों की भिन्न भिन्न ~~ऐसी छोटी~~ मिट्टी के ढेलों के कारण नाना रंग ~~[illegible]~~ दिखाती हुई विहार करती है, पर रहती स्वच्छ धारा ही है। यही हाल बालकों की -

जीवन धारा का है।

हाँ, तो मैं अपने मूल विषय पर आता हूँ, कि जिन बालकों का दिमाग कल्पनात्मक होता है, वे ही झूठी मूठी बात गढ़कर कहा करते हैं, हम लोग इस रहस्य को समझते नहीं; जिससे उन्हें 'यह बड़ा झूठा है, बदमाश है' आदि कहकर तिरस्कार से करते हैं या उनके उस गुण को (जिसे कि अज्ञानता वश लोग अवगुण कहा करते हैं) समझने की चेष्टा नहीं करते कि किस दिशा में कौन सा रस प्रवाहित हो रहा है, इसके दिमाग़ में कौन सी बिजली का संचार हो रहा है। फल क्या होता है कि बालकों की उस विद्युत्शक्ति का प्रवाह विपरीत दिशा में बहने लगता है। जो बच्चे ऐसी बातें गढ़ गढ़ कर के कहा करते हैं कि जिनको सुनकर धुरन्धरों को भी दाँतों तले अँगुली दबानी पड़े तो समझो उन बालकों की कल्पना शक्ति उतनी ही अधिक मात्रा में विद्यमान है। अब हम यदि उनकी इस शक्ति को बाल्यावस्था से ही पहिचान कर उसे ठीक दिशा में प्रवाहित करने का प्रयत्न करें तो इसमें और संदेह नहीं कि वह बचपन से ही प्रतिभाशाली, कल्पनाशील एवं उन्नतात्मा सिद्ध होगा। मास्टर मदन का नाम जिन लोगों ने सुना है उन लोगों को ज्ञात होगा कि वह २-३ वर्ष की अवस्था में अपने आप कुछ न कुछ गुनगुनाया करते थे और लकड़ी आदि से बर्तनों को ताल स्वर से ठीक ठीक बजाया करते थे। उनके अभिभावकों ने बालक की इस विशेषता को समझा और उनके उत्साह को ठीक दिशा में बढ़ाने और विकास पाने का अवसर दिया, उसका फल हुआ वह आज संसार के सामने है। यहां उदाहरण भारी एक दूसरा यह है कि एक स्टेशन मास्टर के २ बच्चे बचपन में खेलते समय भिन्न भिन्न प्रकार के कौतुकों को किया करते थे. उन्होंने लगातार गौर किया कि एक बालक तो खिलौनों को तोड़-तोड़कर फिर से जोड़ा करता है और दूसरा नाना रंग की स्याही आदि घोलकर ~~[illegible]~~ पानी से घोल घोल कर शीशियों में भरा करता है और खेलने वाले लड़कों को 'लो यह दवा पी लो' आदि कहा करता है। उन्होंने यह सब देखकर निश्चय किया कि जो बालक खिलौनों को तोड़ २ कर जोड़ा करता है, उसका दिमाग —

इंजीनियरी है अतः इसे इसी विषय का अध्ययन कराना चाहिए, और दूसरे का किताबी ज्ञान अच्छा है उसे डाक्टरी पढ़ाना चाहिए। उन्होंने ऐसा ही किया और वे दोनों बालक अपने अपने विषय के पारगामी बने और आज ख्यातनाम के साथ २ धनोपार्जन कर रहे हैं।

—o—

अभिभावकों तथा शिक्षकोंसे

देखा जाता है कि अभिभावक तथा शिक्षकगण बालक की भावनाओं का आदर नहीं करते। वे यह भी नहीं जानते कि उनकी बचपन की चेष्टाओं और इच्छाओं का बालक के जीवन के विकास में कितना महत्त्व है। जब बालक अनेक प्रकार की मीठी मीठी खाने की चीजें मांगता है तो अक्सर हम उनकी इन इच्छाओं का तिरस्कार करते हैं। परिणाम यह होता है कि बालक चोरी करके अपनी खाने की इच्छा को तृप्त करने का प्रयत्न करता है। हम यह समझते हैं कि बालक को शैतान ने अपने वश में कर लिया है। हम उसे अनेक प्रकार के दंड देते हैं। इसके परिणाम स्वरूप भयवश बालक अपनी बुरी आदतों को छोड़ देता है, पर वास्तव में उसके चरित्र में कुछ भी उन्नति नहीं होती। इसी तरह जब हम बालक को पढ़ने से जी चुराते, बड़ों की अवज्ञा करते अथवा झूठ बोलते या दूसरे लड़कों को तंग करते देखते हैं, तो हम एकदम क्रुद्ध हो अनेक प्रकार के दंड देने लगते हैं। पर इस तरह न तो बालक की चाल-चलन सुधरती है और न उसके चरित्र में ही उन्नति होती है। ऐसा बालक या तो उद्दंड हो जाता है, या एक दब्बू मनहूस बनकर अपना जीवन व्यतीत करता है। बालक के जीवन में सुधार [illegible] के लिए हमें उसके अचेतन मन का अध्ययन करना चाहिए।
(बाल मनोविकास पृ-३१८)

हमें बालकों के अनेक अनुचित कार्यों के कारण, उनके अचेतन मन के अध्ययन से ज्ञात हो सकते हैं। झूठ बोलना, डींग मारना, आज्ञा की अवहेलना करना, दूसरे बालकों को सताना, स्कूल के सामान को खराब करना, चोरी करना, ~~झूठ बोलना~~ बीड़ी पीना इत्यादि ऐसे अनेक बालकों के कार्य हैं जिनका कारण उनके मन की भावना ग्रन्थियां होती हैं। इन भावना-ग्रन्थियों से जब बालक का अचेतन मन मुक्त हो जाता है तो उसके आचरण में स्वतः ही सुधार हो जाता है।
(बाल मनोविकास पृ-३१८)

1936B Need for Meaningful Education

०श्री०

सत् शिक्षा की आवश्यकता

(१) शिक्षा का उद्देश्य, उसकी सफलता के लिए युधिष्ठिर का महाभारत सम्बन्धी उदाहरण –

(२) शिक्षा के लिए किन २ उपायों का आश्रय लेना चाहिए ।

१- घर में ही महापुरुषों के चरित्रों द्वारा शिक्षा प्रारंभ होना चाहिए.

२- कुसंगति से बचाने का यत्न करना चाहिए – तोतों का दृष्टान्त –

१ गवाशनानां वचनं शृणोत्ययं अहं तु मुनीनां वचनं शृणोमि:
न तस्य दोषो न च मे गुणो वा, संसर्गजा दोषगुणा भवन्ति ।

3 बच्चों के हठ पकड़ने पर सदुपायों से उन्हें समझाना चाहिए
एक जुआ खेलने के लिए उधार माँगते पुत्र की बातचीत –

२ सुतकाहं कलयो महानहं पिता क्षपितोऽजहु: ।
कोटी द्रव्यपतिः पिताऽहमधुना द्यूते भिक्षाचरो ते महान् ।
तातोऽसि त्वयि च: पणोऽहमथवं चूर्णी ततोऽहं महान् ,
रे न्यस्तं तव भार्यया स्वखलधनं द्यूते ततोऽहं महान् ,

४- बालपन की शिक्षा ही धर्म के लिए बलिदान तक करा सकती है
गुरु गोविन्द सिंह के फतहसिंह जोरावर नाम के पुत्रों का मुगल सेनापति वजीर खां द्वारा पकड़े जाने पर उस समय की बातचीत –

१ देख बालकों का प्रियरूप, बोला तुम्हें करूं भूप
किन्तु तजो तुम अपना धर्म, कलमा पढ़ो छोड़ निज कर्म.

उ०- बोले हम हैं बालक वीर, संकट में होते न अधीर.
चाहे नहीं पावें सम्राज, जग के प्रिय सुन्दर सुख साज ।
दुखद मृत्यु या माँ की गोद, दोनों में मिलता है मोद,
शेष तजे चाहे भूभार, चढ़े हिमाचल सुरसरि-धार
सुधा स्रवै रवि, इन्दु अंगार, अमृतपान से तन हो क्षार,
दहै पवन, पावक हो शीतल, नभ-वक्ष हो या जाय रसातल ॥
तौ भी धर्म कर्म सन्मान, तजें न हम जब तक तन-प्राण ॥
स्वर्ण न वश सकते निज प्राण, धर्म हेतु होते बलिदान ॥

५ अकलंक और निकलंक का धर्मार्थ बलिदान ।

(६) बच्चों को जड़-आभूषण न पहनाकर ज्ञान-आभूषण ही पहनाना चाहिए, यदि जड़ ही पहनाना हो तो, संस्कृत-सुभाषित लिखा पहनावें—

मोजके पहनने के कंकणों में ४ आर्याएं लिखी थीं—

(१) इस प्रकार सुप कृतये. प्रकृतिचला यदीह संपदियम् ।
विपदि नियतोदितायां, पुनरुपकर्तुं कुतोऽवसरः ॥

चेनुसे—
निजकर निकर समृद्ध्या धवलय भुवनानि पार्वणशशाङ्क ।
सुचिरं हन्त न सहते, हतविधिरिह सुस्थितं किमपि ॥

तलाब से—
अयमवसरः सरस्ते, सलिलैरुपकर्तुमर्थिनामनिशम् ।
इदमपि सुलभमम्भो, भवति पुरा जलधरास्तुदये ॥

नदी से—
कतिपयदिवसस्थायी पूरो दूरोन्नतोऽपि चण्डरयः ।
तटिनि, तटद्रुमपातिनि, पातकमेकं चिरस्थायि ॥

गले के कण्ठे में लिखा था—
यदि नाक्रमिते सूर्ये, न दत्तं धनमर्थिनाम् ।
तद्धनं नैव जानामि, प्रातः कस्य भविष्यति ॥

कुंडलों पर लिखा था—
ग्रासादर्धमपि ग्रासमर्थिभ्यः किं न दीयते ।
इच्छानुरूपो विभवः, कदा कस्य भविष्यति ॥

(७) माघ कवि का दृष्टान्त
अर्था न सन्ति · · · · · · · · इत्यादि

(८) भोज और सेठ के मंत्री की बातचीत—
आपदर्थे धनं रक्षेद्, भाग्यभाजः कुतोऽपदः ।
दैवं हि कुप्यते क्वापि, संचितोऽपि विनश्यति

(९) एक विद्वान् का मेघ से अन्योक्ति में कहना—
विरम वारिद, वारिदवाहुरैः निशिदिनानन वाललोचने
प्रचलितै मलति क्षण मन्मथा, कुमवानकुपमः कुचचातकः

(१०) उदार को विषय में एक कवि के विचार—
उत्पादिता स्वयमियं यदि तत्तनूजा, तातेन का यदि तदा भजितीः सलुषी
यद्यन्यसंगमवती च तदा परस्त्री, तत्त्यागबद्ध मनसः सुधियो भवन्ति

1937B On raising children

बालकोंके प्रति व्यवहार :—

१- बालकको अधिक गोदीमें न लेना चाहिए। उसे अपना खिलौना न छिनना चाहिए।

२- बालक गिर जाय तो उसे ~~उसे~~ अपने आप उठने देना चाहिए।

३- बालकको अकेले सोनेका अभ्यास कराना चाहिए।

४- बालकको अंधेरेमें चले जानेका अभ्यास कराना चाहिए।

५- जिस घरमें दो बालक हों, दोनोंके साथ बराबरीका व्यवहार करना चाहिए।

६- बालकोंके सुन्दर नाम रखना चाहिए।

७- दूसरोंके सामने बालकोंको डांटना न चाहिए।

८- बालकके छोटे-छोटे कामोंमें रुचि दिखाना चाहिए।

९- बालकको बालकोंके साथ खेलने देना चाहिए।

१०- बहुत सी बातें बालकोंको एक साथ सिखानेकी चेष्टा न करना चाहिए।

११- बालकोंको बार-बार पीटना व डांटना न चाहिए।

१२- बालकोंके खेलकी चीजें बिगाड़ना अथवा छीनना न चाहिए।

१३- बालकोंसे डरावनी कहानियां न कहना चाहिए।

१४- यदि बालक रोता हो तो भूत-प्रेतका भय दिखाकर उसे चुप न करना चाहिए।

१५- बालकोंके साथ हंसो, पर उनपर कभी न हंसना चाहिए।

(बाल-मनोविकास पुस्तकसे)
१९-९-४५.

आदर्श पति कौन ? (विश्वमित्र से)

मुंबई की एक पारिवारिक रिश्तेनाते ठीक रखने वाली संस्था ने मर्दुमशुमारी करके वैवाहिक जीवन के कारण की खोज की है। इस खोज ने निष्कर्ष निकाला है कि पति में नीचे लिखी बातें हों, वही आदर्श पति हो सकता है—

१-	विनोदी पन	~~फी~~ फी सदी	२५
२-	बुद्धिमत्ता और निजस्वच्छता	"	२५
३-	धनोपार्जन की शक्ति	"	१५
४-	गृहस्थी के प्रबन्ध में कुशलता	"	१०
५-	मेल मिलनसारिता	"	१५
६-	बच्चों पर प्यार	"	१०
७-	बीबी से साथिन की तरह बरतना न कि नौकरानी की तरह —	"	२०
			१००

अमृत की तलाश में

वर्तमान समाज की बेकारी और गरीबी के प्रश्न के पीछे पूंजीवाद है जो अधिक से अधिक लाभ उठाने की धुन में मानवता को अपने पैरों के नीचे बड़ी निर्दयता पूर्वक रौंद रहा है। (आजदिन ३।-१३६)

१२।८।३६

जिनके पास सुन्दर ख्यालात हैं, उनके लिए संसार का साम्राज्य भी कोई चीज नहीं है।

(साहित्य-सन्देश)

१९।८।३६

'बच्चे ही मनुष्य के नाम को अंधकार में डूबने से बचाते हैं।'

'ईस्काइलस'

हे बच्चे, यदि मैं राजा होता तो अपने साम्राज्य,
अपने राजदंड, अपने रथ के सामने
झुकने वालों, अपने सोने के मुकुट,
और अपने नाविकों समुद्र में घूमने वाले बड़े जहाजों को
हे बच्चे, तेरी एक मुस्कान पर न्योछावर कर देता"।

'विक्टर ह्यूगो'

'दाम्पत्य-प्रेम'

'इस बात को स्मरण रखो कि मनुष्यों में एकमात्र आपका पति ही सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है और स्त्रियों में एकमात्र आप भी स्त्री ही सबसे अधिक आश्चर्यजनक है।'

×× वैवाहिक जीवन में स्वर्ग, अथवा अधिक से अधिक एकता प्राप्त की जावे। यदि आप स्थायी एकता नहीं ला सकते तो दाम्पत्य सम्बन्ध में बंधना व्यर्थ है। ×× एक दूसरे के व्यक्तित्व का सम्मान करो, अपनी इच्छा को अपने दूसरे साथी पर जबरदस्ती मत लादो। लेकिन तो भी इस उक्ति को कभी मत भूलो — 'समानता सदा ही प्रेम का सबसे प्रबल बंधन है'। जब तक आपको उनमें कमियों की आपत्ति की सम्भावना दिखलाई न दे, एक दूसरे की बात और भावनाओं को स्वीकार करने के लिए सदा तैयार रहा करो। दैनिक कार्यों में एक-दूसरे की इच्छानुसार चलो। अनेक दम्पति तनिक सी बातों पर झगड़ा किया करते हैं, चिड़चिड़े मन को एक मीठी मुस्कराहट से शान्त करो और —

सभी शिकायतों का उत्तर मित्रतापूर्वक और नम्रता से दो। सदा कोरा उत्तर देने का प्रयोग मत करो। सत्य प्रेम की वृद्धि के साथ रचनात्मक कुछ ही दैवी इच्छायें होनी चाहिए, उनको परिस्थिति तथा अवसर के अनुसार प्रकट करते रहो। x प्रेम विवाहित जीवन को आरम्भ करता है, किंतु निःस्वार्थता उसको पूर्ण जीवित और दीर्घजीवी करती है। दम्पति का आनन्द आचरण पर निर्भर है। प्रेमभावों और भावनाओं पर नहीं। x x x उच्च उद्देश्यों के लिए एक साथ काम करो, एक साथ पढ़ो, सभा समितियों में एक साथ जाओ, निर्धन और रोगियों की भी एक साथ सेवा करो, प्रकृति का अध्ययन एक साथ करो, तुलनात्मक कार्य एक साथ करो, नये विचारों पर एक साथ वाद-विवाद करो, उनको एक साथ ही स्वीकार करो, अथवा उनका निषेध करो। एक साथ यात्रा करो, एक साथ संगीत का आनन्द लो, जो भी कोई अच्छा काम हो एक साथ करो, इस प्रकार जब तक आपकी यात्रा पूर्ण न हो, अध्यात्म में भी एक साथ बढ़ते रहो।

जिन प्रसिद्ध दम्पतियों ने उच्च उद्देश्यों और आदर्शों की प्राप्ति में एक दूसरे की सहायता की है, उनके विषय में प्रायः सोचते और वार्तालाप करते रहो।

x x अपने विवाह दिन को प्रत्येक वर्ष अपने मित्रों के साथ मनाना बड़ा उत्तम विचार है।

'चरित्र निर्माण' नामक पुस्तक से
पेज १९५

'उस पुस्तक में इस बात पर बहुत जोर दिया गया है कि वहाँ से साथ जवानों को एक मकान में नहीं रहना चाहिए अर्थात् सम्मिलित कुटुम्ब व्यवस्था उत्तम नहीं है।
"एक योग्य जवान मनुष्य को चाहे वह कुंवारा अथवा विवाहित हो, उचित वय की अवस्था हो जाने पर अवश्य ही अपना पृथक मकान बनाना चाहिए"। पेज २१६

(प्रत्येक स्त्री पुरुष और नव युवकों को चाहिए कि यह पुस्तक अवश्य पढ़ें। (भारती साहित्य मन्दिर देहली) से प्रकाशित।

बाल मनोविज्ञानमें रुचियोंका उपयोग —

1 कामुकता का शोध — संगीत, कविता, कला सौंदर्योपासनामें किया जा सकता है

2 जो बालक दृष्टि कल्पनामें प्रवीण हैं, वे सुन्दर चित्रकार हो सकते हैं ।

3 " श्रुतिकल्पनामें " " संगीत और कवितामें प्रतिभाशाली हो सकते हैं

4 जो बालक तानों और शब्दोंको भली भांति स्मरण रख सकते हैं वे योग्य लेखक वैज्ञानिक तथा वक्ता बन सकते हैं ।

बाल निर्माण —

की प्रथम कुंजी

लोग कहते हैं कि अमुक अमुक संतान तो ऐसी... निकली, वैसी... निकली और यह संतान कुल कलंकिनी निकली, तो कई अपवाद में उलटे पलटी निकली आदि। पर ऐसे कहने वालों से क्या मैं पूछ सकता हूं कि आपके भाव, मन:स्थिति एवं वायु स्थिति उस — उत्तम संतान के उत्पन्न होने वक्त कैसी थी? और उन कलंकी संतान के उत्पन्न होने वक्त वे सब बातें कैसी थी?

× × ×

१६-९-४२

प्रत्येक शिक्षित युवती को बालकों के उपयुक्त सैकड़ों कहानियां आनी चाहिए। माताओं का धर्म है कि बालकों के मनोरंजन के लिए अनेक कहानियां सीखें और उन्हें बालकों से कहें। कितनी थोड़ी माताएं हैं जिनमें इस प्रकार की योग्यता है तथा जो इस योग्यता को प्राप्त करना अपना कर्तव्य समझती हैं। शिवाजी जैसे वीर पुरुषों का आविर्भाव जीजाबाई जैसी माता की गोद में ही हो सकता है। जीजाबाई ने शिवाजी को भारत के शूरवीरों की गाथाएं सुना सुना कर वीर बना दिया था। इसी प्रकार नेपोलियन को उसकी माता ने वीर बनाया था।

(बाल मनोविकास ६०२८८)

Innate intelligences in children (incomplete)

गंगानगर उज्जैन ४ बजे सबेरे
२०।९।३८

(४) कोष्ठबुद्धि ऋद्धि के बीज —

(१) "गोवर्धनाचार्य ने गोचरी को जाते समय भद्रबाहु (जब कि वे निरे बच्चे थे) को तर-ऊपर १४ गोली रखकर खेलते हुए देखा और निमित्तज्ञान से जाना कि यह बालक भविष्य में चलकर द्वादशांग का पारगामी होगा" यदि हम इस घटना को निमित्तज्ञान छोड़कर मनोविज्ञान की दृष्टि से देखें — तो कई एक रहस्य इससे प्रकट होते हैं। जैसे:—

अपने पास नाना प्रकार की चीजें — कागज, होल्डर, चाकू, पेंसिल, छोटे-कांच-पत्थर आदि के टुकड़े, टूटे या साबित खिलौने आदि को संग्रह करने वाले बालक में 'कोष्ठबुद्धि' ऋद्धि के बीज विद्यमान हैं। आज के मनोविज्ञान ने इसका परीक्षण करके देखा है कि इस प्रकार के बालक भविष्य में चलकर बड़े भारी सरस्वती भवनों के (सफल) अध्यक्ष (लाइब्रेरियन), भंडारी, एवं कोषाध्यक्ष (ट्रेज़रर) साबित हुए हैं (देखो शिक्षा मनोविज्ञान, चन्द्रावती लखनपाल लिखित)। और यदि इस प्रकार के बालक का बड़े होने पर दृष्टि-लक्ष्य फेर दिया जाय — तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं जो वह भविष्य में चलकर उक्त ऋद्धि को प्राप्त कर ले। इस ऋद्धि की पूर्णता भले ही इस जन्म में न हो सके, पर आंशिक सफलता मिलने में तो कोई संदेह ही नहीं है।

(२) (३) एक बीज बुद्धि — ऋद्धि के बीज —

प्रायः देखा जाता है कि कितने ही बालक जन्म से ही इस जाति के होते हैं कि किसी एक बात के देख लेने पर उसी जाति की सैकड़ों बातें गढ़ डालते हैं; जैसे किसी अबोध-बालक ने अपने माता-पिता से सुना कि 'घोड़े की पूंछ'। इतना सुनने के बाद वह प्रथम तो घोड़े जैसे चार पांव वाले जानवर के पीछे लटकती हुई कोई चीज़ देखता है, तो वह "उस की पूंछ" कहने लगता है, हालांकि ऊंट, गधा, हाथी, गाय आदि जानवरों की पूंछों में घोड़े की पूंछ से बहुत कुछ विषमता है, किन्तु 'पीछे लटकना' जैसी समानता के कारण ही उसकी वैसी कल्पना ठीक मानी जाती है और व्यवहार में वैसा ही किया जाता है। यह तो एक बिलकुल साधारण सी बात हुई, अब आप इससे आगे बढ़िये — 'आपने किसी आदमी के पीछे धोती-दुपट्टा आदि का एक अंश लटकते देखा — और उसे 'ऐ दुमवाले' आदि शब्दों से पुकारा' आपके बालक ने भी यही बात नोट कर ली, और वह भी जब वैसी बात देखेगा — तो वैसा ही उपयोग करेगा। इससे भी आगे बढ़िये — आपने किसी जाति की एक सी बात किसी व्यक्ति में देखी और उसे उसी नाम से पुकारा — जैसे — किसी में कुटिलता की माला को लिए हुए 'भोगपना' देखा और उसे 'ऐ लोमड़ी की पूंछ' कह कर पुकारा। आपका बालक उक्त बात सुनकर एक बार तो आपकी ओर देखता है और दूसरे ही क्षण उस आदमी की ओर देखता है जिसे कि आपने 'लोमड़ी की पूंछ' कहा है। आप यह न समझिये कि बालक यों ही आपकी या उसकी ओर देख रहा है, बल्कि आपकी वैसी बात सुन कर उसके मन में एक बड़ा सवाल उठ खड़ा हुआ कि लोमड़ी क्या चीज़ है, और उसका पूंछ से क्या सम्बन्ध है? यदि वह लोमड़ी के बारे में आपसे या अन्य किसी से कभी कुछ सुन चुका है, तब तो ठीक; अन्यथा वह तुरंत ही आपसे पूछेगा — कि लोमड़ी किसे कहते हैं, क्योंकि पूंछ के बारे में तो वह पहले ही जान—

उत्सुक है। (इस मौके पर हम लोग बहुधा बड़ी गलती करते हैं और वह यह — कि उसकी शंका को प्रथम तो हम सुनते ही नहीं हैं; या सुनते भी हैं तो यों ही अंटपटांग जवाब देकर चुप करने का प्रयत्न करते हैं; और इतने पर भी वह फिर पूछता है, तो हम उसे उल्टा गुस्सा करकर या डाँट-धमका कर चुप करने की कोशिश करते हैं और उसकी इस बढ़ती हुई शक्ति को सदा के लिए नष्ट कर देते हैं, और यदि आप सहृदय हैं और—) उसकी यह शंका सुनकर उसे अच्छी तरह से समाधान करते हैं, तो आप यह बालक बड़े गौर से आपके एक-एक शब्द को नोट करेगा — और मानसिक बड़े संयम के साथ सामीप्य के ग्रंथ के साथ सम्बन्ध जोड़ने का प्रयास करेगा। इसमें यदि वह कृतकार्य होगा (जितना कि बहुत ही कम आशा है) तब तो ठीक है, अन्यथा फिर वह आपसे पूछेगा कि"

स्वास्थ्योपयोगी आदर्श भोजन

(एक व्यक्ति के लिए १ दिन को)

चावल	५	औंस
आटा	१०	"
दूध	८	"
दाल अरहर	१	"
दाल उड़द	२	"
बिना पत्ते की शाकें	५	"
पत्ते की शाकें	५	"
घी	२	"
केला	१	"

(२ औंस बराबर १ छटाँक)

सरस्वती अक्टूबर १९३८ से उद्धृत

२२।४।७८

विनोद लिखनेके बाद ... २१-७-५५

स्वर्गीय प्रिय सुरेन्द्र,

प्यारे अबोध और जल्दी सिधारे बच्चे,

न मालूम तूने किस अशुभ घड़ीमें हमारे घरमें पैर रखा, कि मैं तुझे दो मिनट को गोदमें भी न ले सका, प्यार दुलार तक न कर सका; दुखी माताकी तो कहे कौन, तेरी बीमारी तक को समझना ही समझता रहा, और परिस्थितियोंवश कुछ भी उपचार तक न कर सका। जब चिकित्साके स्थान पर आया, तो प्रारंभ भी की, तो उसके ८ घंटे बाद ही तू गोदमें एक दम हमसे सदाके लिए विदा होगया। ओफ़, तेरे अन्तिम क्षणकी उसकी स्मृति ताजी है, अभी परसोंकी ही तो बात है, आज क्या, मैं तो जीवनके अन्त तक भी नहीं भूल सकूंगा कि हाय, मासूमी (जो कि तेरा बड़ा भाई होता है) शादीकी वेदीपर तुझे बलि चढ़ जाना पड़ा !!!

सोच रहा हूं, कि इस अपराधके लिये मैं क्या प्रायश्चित करूं और कौनसे उपायसे अनवरत धधकती हुई हृदय-ज्वालाको शान्त कर, बुझाऊं। परिस्थिति स्पष्ट बतला रही है कि उम्र में बच्चोंको संभालने के लिए बिल्कुल ही अयोग्य होगया हूं और इसी लिए नये बच्चेको उत्पन्न करना भी मेरे लिए महान पाप हो गया है। मुझे क्षण-क्षणमें ऐसा लगता है कि बच्चेकी ठीक तौर पर सार-संभाल न कर सकनेके कारण बाल-हत्याका पाप मुझे लगा है और इसका प्रायश्चित्त मुझे करना ही चाहिए।

फिर इस हत्याके पापसे मुक्ति होनेका क्या उपाय है?